ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 92-94

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

वैदिक साहित्य में कर्म और जीवन की श्रेष्ठता

रचना शर्मा
इतिहास विभाग, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म0प्र0), भारत

Received- 05.08.2020, Revised- 09.08.2020, Accepted - 13.08.2020 E-mail: - sharmashiva459@gmail.com

सारांश : ***वेद भारतीय इतिहास के प्राचीनतम अभिलेख हैं, वेदों को भारत का प्राचीनतम साहित्यिक कीर्तिस्तम्भ माना गया है और इन्हें हम भारतीय चिंतन का मूल स्त्रोत भी कह सकते हैं। ऋग्वेद में कर्म और जीवन की श्रेष्ठता का विधिवत उल्लेख मिलता है, जिससे वेदों की व्यावहारिकता का ज्ञान होता हैं। जीवन की श्रेष्ठता श्रेष्ठ कर्म में निहित है, श्रेष्ठ कर्म न करने वाला मनुष्य चाहे कितना भी श्रेष्ठ मनुष्य हो ऋग्वैदिक सिद्धांतों के अनुसार, वह अर्थहीन और प्रकृति के लिए अनुपयोगी है। वेद जीवन के प्रति इसी भावना को प्रबलता प्रदान करते हैं। वेद जीवन के विभिन्न पक्षों पर अभिमत व्यक्त करते हुए यह प्रतिपादित करतें हैं कि "समस्त नदियाँ विभिन्न मार्गों से अपना पथ तय करते हुए अतः सागर में समाहित हो जाती हैं उसी प्रकार वेदों के समस्त विषय मानव को कर्म और जीवन की श्रेष्ठता की ओर ले जाने में सहायक सिद्ध होते हैं।"***

कुंजीभूत शब्द– प्राचीनतम, अभिलेख, साहित्यिक, कीर्तिस्तम्भ, भारतीय चिंतन, मूल स्त्रोत, श्रेष्ठता, विधिवत ।

वैदिक साहित्य विश्व का प्राचीनतम साहित्य है और ऋग्वेद इस साहित्य का सबसे प्राचीन, विशाल एवं सर्वमान्य ग्रन्थ है। भारतीय सभ्यता और संस्कृति की सम्पूर्ण प्रेरणा इसी में मिलती है। भारतीय संस्कृति का विश्व में महत्वपूर्ण स्थान रहा है। डॉ0 रामगोपाल शर्मा का कथन सर्वथा उचित है कि भारतीय संस्कृति सार्वभौम आदर्शों में प्रेरित रही है। सत्य कि खोज, मानव कल्याण कि भावना, सौंदर्य कि अभिव्यक्ति, कर्मो कि श्रेष्ठता इसका मुख्य ध्येय है।

आर्यों का ज्ञान वैदिक साहित्य में निहित है, जो बहुत विस्तृत और मूल्यवान मन गया है। इसे ईश्वर ने कुछ ऋषियों को ज्ञान के रूप में स्वयं प्रदान किया है और उसके पश्चात् यह एक ऋषि से दूसरे ऋषि में क्रमशः मौखिक रूप से हस्तांतरित होता गया, यह ईश्वरीय ज्ञान मौखिक रूप से ही सदियों तक एक–दूसरे ऋषि को दिया जाता रहा है इस कारन ही वैदिक साहित्य को श्रुति साहित्य भी कहा गया है ।

श्रुति साहित्य में वेदों को प्रथम स्थान दिया है जिन्हें संहिताएँ कहा गया है और इन संहिताओं में कर्म और जीवन की श्रेष्ठता को महत्ता दी गयी है। वेद भारतीय संस्कृति के मूल स्रोत हैं, वेदों की अनन्त महिमा, अगाध ज्ञानराशि एवं वास्तविक स्वरूप से परिचित कराने के उद्देश्य से हमारे महर्षियों ने नाना प्रकार से इसका गान किया है। ऋग्वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार, यदि मानव अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए श्रेष्ठ कर्म करे तो, निश्चित ही श्रेष्ठ मानव होने का सौभाग्य प्राप्त कर सकता है। श्रेष्ठ कर्म ही मानव को श्रेष्ठ जीवन की ओर ले जाते हैं और फिर कर्म करना मानव का स्वभाव व विवशता दोनों ही है क्योंकि भगवत गीता के अनुसार 'मनुष्य बिना कर्म किए एक क्षण भी नहीं रह सकता है।'

न हिकश्चित्क्षणमपिजातुतिष्ठत्य कर्मकृत।
कार्यते ह्यवशः कर्मसर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः।।
(भगवतगीताअध्याय–3, श्लोक–5)

अर्थात् : निःसन्देह कोई भी मनुष्य किसी भी काल में क्षण मात्र भी बिना कर्म किए नहीं रहता, क्योंकि सारा मनुष्य समुदाय प्रकृति जनित गुणों द्वारा परवश हुआ कर्म करने के लिए बाध्य किया जाता है। जैसा कि ऋग्वेद सिद्धान्त भी इस बात की पुष्टि करता है यथा –

जातोजायतेसुदिनत्वेअहनांसमर्यआविदथे वर्ध्मान।
पुनन्ति धीराअपसोमनीषादेवयाविप्रउदियर्तिबाचम्।।
(ऋग्वेद–3–8.5)

अर्थात् जिस व्यक्ति ने जन्म लिया है, वह जीवन को सुन्दर बनाने के लिए उत्पन्न हुआ है, वह जीवन संग्राम में लक्ष्य साध्न हेतु अध्यवसाय करता है। धीर व्यक्ति अपनी मनन शक्ति से कर्मों को पवित्रा करते हैं और विप्रजन दिव्यभावना से वाणी का उच्चारण करते हैं। फिर वेदों से ही हमें सुव्यवस्थित जीवन जीने की कला प्राप्त होती है, क्योंकि वास्तव में वेद विश्व वाघ्मय की अमूल्य निधि है। भारतीय संस्कृति की गौरवगाथा वेदों से प्रारम्भ होती है। वेदों में सब कुछ प्रतिष्ठित है। इस रहस्य का महाभारत ने वर्णन इस प्रकार से किया गया है।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

सर्वविदुर्वेदाविदोवेदेसर्वप्रतिष्ठितम्।
वेदेहिनिष्ठासर्वस्य यद् यदस्ति च नास्तिच।।
(महा शन्ति. 27–01–43)

'वेदों नारायणः साक्षात स्वयम्भूरित शुश्रुम' कहकर हमारे पूज्य ऋषियों ने वेदों की अपार महिमा अभिव्यक्त की हैं ऋग्वेद का एकमात्र प्रतिपाद्य विषय जीवन की श्रेष्ठता ही है, जो श्रेष्ठ कर्म द्वारा निर्मित होता है, चाहे वह अध्यात्म हो, कर्म हो, देवत्व हो या अन्य सभी विषय उन सबका उद्देश्य मात्रा श्रेष्ठतम जीवन का निर्माण है। ऋग्वेद दर्शन यही कहता है, कि मानवचेतना के प्रदीप्त हुये बिना मुक्ति के सारे मार्ग अवरूद्ध हैं। मानव चेतना जब प्रदीप्त हो उठती है, तब हमें ज्ञात होता है कि हम जीवन के जिस परम लक्ष्य की तलाश कर रहे हैं, वह और कुछ नहीं बल्कि स्वयं हमारा श्रेष्ठतम कर्म ही था, हम जिसे विभिन्न देवताओं से उपासनाओं में मांग रहे थे, वह स्वयं ही हमारे हाथों में था। मनुष्य के अपने हाथ ही परम भगवान है –

अयंमेंहस्तोभगवानयंमेंभगवत्तरः।
अयंमेंविश्वभेजषोइंय शिवाभिमर्शन।।
(ऋग्वेदः 10–60–12)

भावार्थ– दुस्कर से दुष्कर कार्य करने में समर्थ मेरे ये हाथ भगवान से भी श्रेष्ठ हैं, जिसके द्वारा कर्म करने पर भगवान को भी पफल देने के लिए विवश होना पड़ता है, यह मेरा हाथ विश्व के समस्त रोगों का औषध तथा सभी समस्याओं का समाधन है।

यद्यपि ऋग्वेद दर्शन मानव को सदैव श्रेष्ठ कर्म करने की शिक्षा व प्रेरणा प्रदान करता है परन्तु मनुष्य के द्वारा श्रेष्ठ कर्म तभी सम्पादित किए जा सकते हैं, जब हम व्यक्तिगत निष्ठा से परे जाकर समस्त मानव जाति के साथ–साथ सृष्टि में उत्पन्न जीव मात्रा के लिए विचार कर सकें, यही श्रेष्ठ सोच श्रेष्ठतम जीवन का निर्माण करती हैं। ऋग्वेद के अनुसार हमारी सोच कैसी हो? इसका एक ऋचा के माध्यम से वर्णन किया गया है जो इस प्रकार है

– समानी बच आकूतिः समानाह्रदयानिवः।
समनाम[स्तु वो मानी यथाबः सुसहास्वंति।।
(ऋग्वेद– 90–19–4)

भावार्थ– हम सबके जवीन का एक लक्ष्य हो एक ह्रदय हो और एक ही मन हो, जिसमें हम सब मिलकर जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त कर सके।, यही मानव जीवन की चरम श्रेष्ठता है।

समाज में सुख शान्ति की स्थापना, समृद्धि सेवा भावना, सामंजस्य, स्थापना, सहयोग, सत्याचरण, सम्बेदना से परिपूर्ण हृदय और मनन शील मनुष्य बनने की सदप्रेरणा प्रदान करना ही श्रेष्ठ कर्म है और यही कर्म करने वाला मनुष्य श्रेष्ठ जीवन जीता है। श्रेष्ठ मनुष्य वही माना जाता है जो असत्तिफ का परित्याग कर श्रेष्ठ कर्म करता है, भगवान श्रीकृष्ण गीता में अर्जुन से कहते हैं :–

नियतंकुरू कर्मत्वंकर्मज्यायोह्यकर्मणः।
शरीर यात्राापि च तेनप्रसिद्धः येदकर्मणः।।
(गीताअध्याय 3, 8)

भावार्थ– भगवान कहते हैं अर्जुन तू शास्त्र विहित कर्म कर क्योंकि कर्म न करने से तेरा शरीर निर्वाह भी नहीं सिद्ध होगा।

श्रेष्ठ कर्म वही कहलाता है, जो एक–दूसरे को उन्नत करने के लिए किया जाय, कर्म न करने वाले का तो देवता भी साथ नहीं देते अर्थात् देव यज्ञकर्ता, पुरूषार्थी तथा भक्त को चाहते हैं आलसी से प्रेम नहीं करते। पिफर जैसा कि ऋग्वेद में वर्णित है –

'इच्छन्तिदेवाः सुन्वन्तं न स्वत्नाय स्प्रध्यन्ति।'
(ऋग्वेद 8/12/18)

इस आधर पर जीवन की श्रेष्ठता श्रेष्ठ कर्म में निहित है श्रेष्ठ कर्म न करने वाला मनुष्य चाहे कितना ही श्रेष्ठ मनुष्य हो वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार वह अर्थहीन और प्रकृति के लिए अनावश्यक है। बेदार्थ परिजात के अनुसारें, हमारे मनीषियों द्वारा यदि वेद विहित श्रेष्ठ कर्म न किए जाते तो विश्व के अध्यात्म मत, पंथ और चिन्तन का कोई भी अंग आज जैसा है वैसा नहीं होता। ऋषियों के अनुसार वेद विद्या भारतीय संस्कृति का आधर हे, जो मानव जीवन की चरम श्रेष्ठता को पूर्ण रूप में समझती है। ऋग्वेदानुसार – जीवन की चरम श्रेष्ठता, श्रेष्ठ कर्म में निहित है और श्रेष्ठ कर्म, तक तब तक सम्पादित नहीं हो सकता, जब तक हमारी व्यक्तिगत इच्छा सम्मिलित नहीं है।

ऋग्वेद में धर्म, दर्शन, ज्ञान, विज्ञान, कला–कौशल, योग, संगीत, शिल्प, मर्यादा लोक आचरण आदि मानव जीवन के लौकिक और पारलौकिक उत्थान के लिए उपयोगी सभी सिद्धान्तों एवं उपदेशों का अद्भुत वर्णन किया है एवं ऋग्वेद की उपयोगिता एवं प्रासंगिकता पाश्चात्य विद्वान मैक्समूलर की अनुभूति से और अधिक बढ़ जाती है यथा

–यावत् स्थास्यन्तिगिरयः सरितश्चमहीतले

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

तावत् ऋग्वेदमहिमालोकेषुप्रचरिष्यति।।
भगवतगीतारहस्य –बालगंगाधरतिलक

भावार्थ– जब तक पृथ्वी पर गिरिराज, हिमालय और देव नदी गंगा की आपार महिमा व्याप्त है,उसी प्रकार लोक में ऋग्वेद की महिमा का प्रचार है।

वैदिक साहित्य की विचारधारा का विकास यह प्रमाणित करता है कि क्रमशः भारतीय लोग मूर्त देवाताओं की अपेक्षा भावरूप देवताओं की कल्पना करने लगे ऋग्वेद में प्रतिपादित धर्मिक विचारों के विकास का परिणाम यह हुआ कि सब देवाताओं से श्रेष्ठ एक परम पुरूष की कल्पना प्रसूत हुयी। उपयुक्त शोध पत्र के माध्यम से यह प्रकाश डालने का प्रयत्न किया गया है कि जीवन में कर्मों का विशेष महत्त्व है और जो भी कर्म किये जाते हैं उनका उसी के अनुसार परिणाम नियत होता है, फिर वर्तमान सन्दर्भ में मनुष्य के द्वारा जो कर्म किये जा रहे हैं उस सन्दर्भ में यह लेख महत्वपूर्ण हो जाता है ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. ऋ. 5.4.3।
2. ऋ. 3.1.18।
3. ऋ. 1.14.7।
4. ऋ. 8.60.2।
5. ऋ. 3.2.13।
6. ऋ. 5.2.3।
7. शास्त्री, हरिदत्त एवं कुमार कृष्ण, ऋक्सूक्त संग्रह, साहित्य भण्डार, मेरठ, पृ. 13।
8. ऋग्वेद– 1/95, 3/29, 2, 6/15/17, 6/16/13।
9. ऋग्वेद– 10/8/4।
10. ऋग्वेद– 1/160/3।
11. निरूक्त, 7/4/14।
12. सायण भाश्य, 3/29/11।
13. निरूक्त, 8/2/4।
14. निरूक्त, 2/2/5।
15. निरूक्त, 8/2/6।
16. निरूक्त, सम्मर्श, स्वामी ब्रह्ममुनि पृ. 628–632।
17. सहाय, शिवस्वरूप, उपर्युक्त, पृ. 20।
18. शास्त्री, हरिदत्त एवं कुमार कृष्ण, उपर्युक्त, पृ. 13।
19. विद्यालंकार, सत्यकेतु, उपर्युक्त, पृ. 270।
20. शास्त्री, हरिदत्त एवं कुमार कृष्ण, उपर्युक्त, पृ. 13।
21. त्रिपाठी, रमाशंकर, वैदिक–साहित्य और संस्कृति, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2012, पृ. 61–62।
22. शास्त्री, हरिदत्त एवं कुमार कृष्ण, उपर्युक्त, पृ. 14।
23. द्विवेदी, कपिलदेव, उपर्युक्त, पृ. 297।
24. ऋग्वेद– 1/164, 34–35।
25. एतरेय ब्रा., 2/37।
26. झा, विद्येश्वर, उपर्युक्त, पृ. 170।

*****

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*